International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 04, No. 04(I), October - December, 2022, pp. 216-220

वैदिक सूक्तों में नारी प्राधान्यः उषस् एवं वाक् सूक्त विशेष

डॉ. नेहा शर्मा*

प्रस्तावना

"विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभ्यन्ते एभिर्धर्मादि–पुरुषार्था इति वेदाः"[1]

अर्थात् धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष रूपी पुरुषार्थ चतुष्ट्य का सर्वांगीण विवेचन कर उनकी प्राप्ति करवाने वाले ग्रंथ साक्षात् वेद ही हैं। मनु ने वेदों को समस्त ज्ञान का आधार माना है। जहां एक ओर भारतीय संस्कृति का यथार्थ ज्ञान वैदिक वांग्मय में मिलता है तो दूसरी ओर सृष्टि के निर्माण एवं विकास संबंधी दार्शनिक सिद्धांत, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, काव्यशास्त्र, मनोविज्ञान, आयुर्वेद, जंतु विज्ञान, रसायन शास्त्र, प्रौद्योगिकी, अध्यात्म आदि का विस्तृत अध्ययन वेदों की प्रमुख देन है। मानव मात्र के मार्गदर्शन के लिए वेदों का ज्ञान मंत्रों के साक्षात्कार द्वारा परमसिद्ध ऋषियों को परमात्मा से प्राप्त हुआ था। इस विषय में शतपथ ब्राह्मण का अग्रलिखित कथन वेदों की अपौरुषेयता सिद्ध करता है–

"एवं वा अरे अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद् यद्
ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो अथर्वाङ्गिरसः"[2]

अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद उस परब्रह्म के श्वास स्वरूप हैं। अतः परमात्मा के अनुग्रह से यह वेद स्वरुप ईश्वरीय ज्ञान ऋषियों ने अपनी उच्च साधना से प्राप्त किया था।

मंत्रदृष्टा ऋषियों ने विविध देवताओं की स्तुति जिन मंत्रों के माध्यम से की है, उन्हें ऋक् या ऋचा कहते हैं। ऋग्वेद में इन्हीं मंत्रों अथवा ऋचाओं का विस्तृत संकलन प्राप्त होता है। अतः **"ऋचं वाचं प्रपद्ये"[3]** अर्थात् ऋग्वेद में ब्रह्म प्राप्ति का वर्णन है। ऋग्वेद तथा ब्राह्मण ग्रंथों में ऋषियों को मंत्रकृत अर्थात मंत्रों का कर्ता बताया है। **"स्त्रियो मंत्रकृतः"[4]** अर्थात् जैमिनी ब्राह्मण में मंत्रकर्ता नारियों का उल्लेख मिलता है, इसी प्रकार तैत्तिरीय ब्राह्मण में कहा गया है –

"यामृषयो मन्त्रकृतो मनीषिणः अन्वच्छन् देवास्तपसा श्रमेण ।
तां देवीं वाचं हविषा यजामहे०"[5]

अर्थात् ऋषियों ने अपनी तपस्या और परिश्रम से देवी वाणी का अन्वेषण किया था और हम उन्हीं की आराधना करते हैं। स्पष्ट है कि मंत्र दृष्टा ऋषियों के रूप में नारियों का भी विशेष स्थान रहा है। ऋग्वेद में सावित्री, अदिति, अपाला, उर्वशी, घोषा, आम्भृणी, आत्रेयी, लोपामुद्रा, पौलोमी आदि 24 ऋषिकाओं तथा अथर्ववेद में इंद्राणी, सर्पराज्ञी आदि 5 मंत्र दृष्टा ऋषिकाओं का उल्लेख है।

ऋग्वेदीय सूक्तों में नारी प्राधान्य

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला क्रिया ।।" [6]

अर्थात् जहां स्त्रियों का आदर होता है, वहां देवता रमण करते हैं। जहां उनका आदर नहीं होता, वहां सब काम निष्फल हो जाते हैं। मनुस्मृति में वर्णित उपरोक्त कथन पूर्ण रूप से न्याय संगत लगता है क्योंकि वेदों में नारी को अत्यंत श्रेष्ठ स्थान प्रदान किया गया है। इसे गृह पत्नी अथवा गृह स्वामिनी का अधिकार प्राप्त होता है। इसके बिना यज्ञ को अपूर्ण माना गया है। ऋग्वेदानुसार–

* व्याख्याता–संस्कृत, एस.एस.जी.पारीक महिला महाविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।

"स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ"[7]

अर्थात् स्त्री ही साक्षात ब्रह्मा है। वह ज्ञान में उत्कृष्ट एवं समाज में अग्रगम्य मानी गई है। स्त्री सेना का उल्लेख करते हुए ऋग्वेद में लिखा है कि–

"स्त्रियो हि दास आयुधानि चक्रे"[8]

अर्थात् असुरों ने शत्रुओं से युद्ध करते समय स्त्री सेना को आगे कर लिया। साथ ही ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के 116 वें सूक्त के 15 वें मंत्र में वर्णन मिलता है कि शत्रु से युद्ध करते हुए विश्पला का पैर कट गया था और अश्विनी कुमारों ने उसे एक नकली लोहे की टांग लगा दी, तत्पश्चात विश्पला ने फिर से युद्ध में भाग लिया।

स्त्रियों के गौरव को परिलक्षित करने वाले उपर्युक्त उद्धरणों में स्पष्ट दृष्टिगत होता है कि वैदिक काल में नारियों को सामाजिक एवं राजनीतिक, रक्षा आदि सभी क्षेत्रों व दिशाओं में उन्नति एवं प्रगति करने की स्वतंत्रता थी, इसीलिए उस समय महिलाएं अत्यंत विदुषी और अद्भुत ज्ञान से ओतप्रोत रहती थीं। उस समय के मातृसत्तात्मक समाज में स्त्री श्रेष्ठ और उच्चतम भूमिका में थी।

"पुत्रों की ही भाँति पुत्री भी अपने पिता की संपत्ति में समान रूप से उत्तराधिकारी है।"[9]

ऋग्वेद के तीसरे मण्डल में वर्णित इस उल्लेख में परिवार एवं समाज में नारी के अधिकारों की समानता तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का विशेष परिचय प्राप्त होता है। चूंकि वेदों में भारतीय संस्कृति का यथार्थ दर्शन प्रस्तुत है अतः विशेष रूप से इन में स्त्रियों की शिक्षा–दीक्षा, आचरण, कर्तव्य, अधिकार आदि का भी विशद् वर्णन प्राप्त होता है। चारों वेदों में सर्व प्राचीन एवं अति महत्वपूर्ण इस ऋग्वेदीय संहिता में आध्यात्मिक, दार्शनिक, कलात्मक एवं वैज्ञानिक तथ्यों का सम्यक् विवेचन प्राप्त होता है। यहां सूक्तों के माध्यम से अग्नि, इंद्र, वरुण, मरुत, अश्विनौ, सोम आदि देवताओं का विश्व की महान शक्तियों के रूप में तो विवरण मिलता ही है अपितु साथ ही वाग्देवी, ऊषा, श्रद्धा, ईडा, सरस्वती आदि देवियां भी मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक और भाषा वैज्ञानिक तथ्यों का निरूपण करती हैं।

उषस् सूक्त विशेष

ऋग्वेद में वर्णित उषस् नामक सूक्त में देवियों में प्रमुख उषा देवी से संबंधित स्तुतियों का बहुत ही सुंदर तथा काव्यात्मक रूप में कथन किया गया है। उषस् सूक्त ऋग्वेद के तृतीय मण्डल का इकसठवाँ सूक्त है। इसके ऋषि विश्वामित्र तथा देवता उषस् (उषा) देवी है। प्रस्तुत सूक्त में उषा को एक सद्यः स्नाता अलंकृता युवती और विशेष रूप से शोभायमान बताया गया है। रात्रि तथा उषा को दो बहनों के रूप में चित्रित किया गया है तथा उनका उषासानक्ता और नक्तोषासा के रूप में वेदों में वर्णन प्राप्त होता है। वेदों के अनुसार उषा पुराणी युवती होकर भी नित–यौवना है क्योंकि यह अजरत्व और अमरत्व का प्रतीक है। इसे सुभगा अर्थात सौभाग्यवती, रेवती अर्थात धन–वैभव से युक्त, प्रचेता अर्थात अत्यंत बुद्धिमती, मघोनी अर्थात दानशीला आदि सुन्दर विशेषणों से अलंकृत किया गया है।

उक्तं च–

"उषः प्रतीची भुवनानि विश्वोर्ध्वा तिष्ठस्यमृतस्य केतुः ।

समान्मर्थ चरणीयमाना चक्रर्मिक नण्यस्या ववृत्स्व ॥"[10]

उषा देवी का यशगान करते हुए ऋषि विश्वामित्र कहते हैं कि हे उषा देवी! आप सम्पूर्ण लोकों की ओर जाती हो तथा मरण धर्म से रहित सूर्य की ध्वजा अर्थात् उनकी सत्ता का बोध कराने वाली हो। सभी लोकों के सम्मुख ऊपर आकाश में स्थित होती हो। हे उषा! आप सदा नवीन रहने वाली हो, कभी प्राचीन नहीं हो सकती। जिस प्रकार सूर्य का चक्र सदा घूमता रहता है उसी प्रकार आप भी एक ही मार्ग पर विचरण करती हुई सर्वथा चिरस्थायी बनी रहें।

इसी प्रकार उषा के लिए अलग–अलग स्थानों पर "स्वः जनन्ती" अर्थात् स्वर्ग को सजीव करती हुई, श्अव् स्युमैव चिन्वतीश अर्थात् अपने वस्त्र के अहंकार को फेंकती हुई चली जाती हुई भी बताया गया है।

उषस् सूक्त के अग्रलिखित मंत्र में ऋषि विश्वामित्र सभी स्तुति करने वालों से कहते हैं कि–

"अच्छा वो देवी युषसं विभाती प्र वो भरध्वं नमसा सुवृक्तिन् ।

ऊर्ध्व मधुधा दिवि पाजो अश्रुत प्ररोचना रूरूचे रण्वसंदृक् ॥"[11]

अर्थात् हे स्तुति करने वाले स्तोताओं, आपके समक्ष जो निर्मल रूप से अच्छी प्रकार प्रकाशित होती हुई ये उषा देवी हैं, इन्हें आप सभी नमस्कार करें और इनकी उत्तम एवं सुंदर स्तुति करें। उषा देवी मधु तथा आदित्य को धारण करने वाली है। द्युलोक को प्रकाशित करने वाली यह देवी रमणीय दर्शन वाली होती हुई देदीप्यमान लोकों को अपने अतिशय रूप एवं तेज से प्रकाशित करती है।

इसके साथ ही उषा को ऋतावरी अर्थात सत्य नियमों का पालन करने वाली कहते हुए इसे विचित्र शक्तियों से संपूर्ण देवी माना गया है। यतोहि–

"ऋतावरी दिनो अर्कैरबोध्या रेवती रोदसी चित्रमस्थात् ।

आयतीमग्ने उषसं विभाति वाममेषि द्रविणं भिसमाणः ।।"[12]

अर्थात् सत्य नियमों का पालन कराने वाली उषा देवी अनेक प्रकार के तेज पुञ्ज रूपों तथा धन से युक्त द्युलोक और पृथ्वी लोक को व्याप्त करके प्रतिष्ठित होती है। अतः हे अग्नि देव! अपनी ओर आती प्रकाशमान उषा देवी से हवि की याचना करते हुए आप अभीष्ट धन को प्राप्त करते हो। इस प्रकार उक्त मंत्र में ऋषि विश्वामित्र ने उषा देवी की प्रशंसा कर उसे सर्वाधिक प्रकाशमान तथा दानशीला कहा है।

साथ ही इसे सूर्य की प्रेमिका तथा पत्नी भी कहा गया है। ऋग्वेदानुसार सूर्य उषा के बाद उदय होता है और वह अपनी प्रेमिका उषा का अनुगमन करता रहता है। इसी क्रम में उषा देवी भी अपने प्रिय से मिलने के लिए उत्कंठित रहती है। वैदिक वांग्मय में उषा देवी का जितना सुंदर एवं काव्यात्मक वर्णन प्राप्त हुआ है, ऐसा किसी अन्य देवता का नहीं हुआ। वह सारे संसार को नई चेतना, उत्साह और स्फूर्ति से भर देती है।

आचार्य यास्क ने उषस् के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिये ऋग्वेद की एक ऋचा प्रस्तुत की है –

"एता उ त्या उषसः केतुमक्रत पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते।

निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः प्रति गावोऽरुषीर्यन्ति मातरः।।"[13]

अर्थात् ये वे उषायें हैं, जो अन्तरिक्ष के प्रथम आधे भाग में सूर्य के प्रकाश से अपने को सम्यक् रूप से अभिव्यक्त करती हुई लोक का प्रज्ञान कराती हैं। जिस प्रकार धार रखने वाले आयुधों को निर्मल बनाते हैं, ठीक उसी प्रकार उषा सूर्य की अपनी प्रभा से तम स्वरूप मल को दूर करके लोक का निर्मल संस्कार करती है अर्थात् शुद्ध बनाती है। यह उषा जिस से उत्पन्न होती हैं, उसी सूर्य में इनका समाहार भी हो जाता है। रात्रि के पश्चिम भाग में सूर्यरश्मियों की सीमा का विस्तार हो जाने पर अन्धकार में उषाओं का जन्म होता है और उनसे प्रकाश की उत्पत्ति होती है। इस प्रकाश के जन्म को ही उषा नाम से जाना जाता है।

अपि च–

"ऋग्वेद में उषा के सात रूपों का वर्णन मिलता है – वेग प्रदायक, ज्ञान–सूर्य से संपर्क करने वाली, वस्तुओं में अद्भुत ऐश्वर्य वाली, ऋषियों द्वारा स्तुत्य, भक्तों द्वारा स्तुत्य, ऐश्वर्य प्रदायक एवं तम को जलाने वाली।"[14]

उषस् सूक्त के विभिन्न मंत्रों में दिए गए उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट दृष्टिगत होता है कि उषा विश्व की एक अति सुंदर, प्रकाशदात्री, विदुषी और शिक्षिका देवी हैं। नाना शक्तियों से संपन्न तथा विशेष भासमान होती हुई, सुन्दर रथ पर सवार, संपूर्ण लोकों के समक्ष मरण धर्म से रहित एवं अमृत केतु स्वरूप उषा देवी जो संपूर्ण कालावधि में कभी रुकने वाली नहीं है तथा जिसका द्युलोक से पृथ्वी लोक तक अंतिम विस्तार है, को वैदिक सूक्तों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

वाक् सूक्त विशेष–

वैदिक काल में नारी महिमा को विशेष उल्लेखित करने वाले देवी प्रधान सूक्तों में वाक् सूक्त अत्यंत महत्वपूर्ण सूक्त है। इसे देवी सूक्त अथवा अम्भृणी सूक्त भी कहा गया है। ऋग्वेद के दशम मंडल के 125 वें सूक्त में आठ ऋचाएं वाक् सूक्त के रूप में वर्णित हैं। उत्तम पुरुष में लिपिबद्ध इन 8 मंत्रों में वाग्देवी का वाक् तत्व, शब्द ब्रह्म, शब्द तत्व तथा ब्रह्म के रूप में वर्णन किया गया है। सर्वत्र व्याप्त यह वाक् तत्व इन्द्र, अग्नि, सोम मित्र, वरुण आदि प्रधान देवताओं की ऊर्जा का प्रमुख स्त्रोत है।

इस सूक्त में अम्भृण–ऋषि की पुत्री वाक् देवी ब्रह्मसाक्षात्कार से सम्पन्न होकर स्वयं को ही सर्वात्मा के रूप में अभिव्यक्त कर रही है। ये ब्रह्मस्वरूपा वाग्देवी ब्रह्मानुभवी जीवन्मुक्त महापुरुष की ब्रह्ममयी प्रज्ञा ही है।

यथा उक्तं–

"अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।

तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥"[15]

अर्थात् मैं ही राष्ट्री अर्थात् सम्पूर्ण जगत् की ईश्वरी हूँ। मैं उपासकों को उनके अभीष्ट वसु–धन प्राप्त कराने वाली हूँ। मैंने जिज्ञासुओं के साक्षात् कर्तव्य परब्रह्म को अपनी आत्मा के रुप में अनुभव कर लिया है। जिनके लिये यज्ञ किये जाते हैं, उनमें मैं सर्वश्रेष्ठ हूँ। सम्पूर्ण प्रपञ्च के रुप में मैं ही अनेक–सी होकर विराजमान हूँ। सम्पूर्ण प्राणियों के शरीर में जीवनरुप में मैं अपने–आपको ही प्रविष्ट कर रही हूँ। भिन्न–भिन्न देश, काल, वस्तु और व्यक्तियों में जो कुछ हो रहा है, किया जा रहा है, वह सब मुझमें और मेरे लिये ही किया जा रहा है। सम्पूर्ण विश्व के रुप में अवस्थित होने के कारण जो कोई जो कुछ भी करता है, वह सब मैं ही हूँ। ऋग्वेद के उपर्युक्त मंत्र से स्पष्ट है कि वाग्देवी एक राष्ट्र निर्मात्री शक्ति है। इसके बिना संसार में एक पत्ता भी नहीं हिल सकता।

अत्यंत तेजस्विनी, ओजस्विता से परिपूर्ण, शत्रु वध के लिए सदैव तत्पर रहने वाली, साक्षात् रूद्र देवता को भी संहार हेतु प्रेरित करने वाली यह वाग्देवी संपूर्ण लोकों में अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान है। जैसा कि कहा गया है–

"अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ ।

अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश ॥" [16]

अर्थात् मैं वाक् देवी ही ब्रह्मज्ञानियों के शत्रु, हिंसारत त्रिपुरवासी, त्रिगुणाभिमानी अहंकारी असुर का वध करने के लिये संहारकारी रुद्र देवता के धनुष पर ज्या (प्रत्यञ्चा) चढाती हूँ। मैं ही अपने जिज्ञासु स्तोताओं के विरोधी शत्रुओं के साथ संग्राम करके उन्हें पराजित करती हूँ । मैं ही द्युलोक और पृथिवी में अन्तर्यामी रुप से प्रविष्ट हूँ।

इसी प्रकार इस सूक्त के एक अन्य मंत्र में उल्लेख मिलता है कि–

"अहमेव वात इव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।

परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना सं बभूव ॥"[17]

अर्थात् जिस प्रकार वायु किसी अन्य से प्रेरित ना होकर स्वयं प्रवाहित होता है उसी प्रकार मैं वाग्देवी किसी दूसरे के द्वारा प्रेरित या अधिष्ठित ना होकर स्वयं ही कारण रुप से सम्पूर्ण भूतरुप कार्यों का आरम्भ करती हूँ। मैं आकाश और इस पृथ्वी से भी परे हूँ। मैं सम्पूर्ण विकारों से परे, असङ्ग, उदासीन, कूटस्थ ब्रह्मचैतन्य हूँ। अपनी महिमा से सम्पूर्ण जगत् के रुप में मैं ही विद्यमान हूँ। इस प्रकार उक्त ऋग्वेदीय मंत्रों से स्पष्ट लक्षित होता है कि वाग्देवी स्वयं प्रतिभावान तथा वायु के समान सर्वत्र गतिशील है। संपूर्ण सृष्टि की निर्मात्री इन वाग्देवी की कृपा से ही मनुष्य, ऋषि, मुनि, योगी, सिद्ध और मेधावी उत्पन्न होते हैं। विश्व की आध्यात्मिक तथा भौतिक उन्नति के लिए वाग्देवी की अनिवार्यता प्रमुख रूप से वैदिक देवियों की महिमा का यशोगान करती है।

उपसंहार

वैदिक काल में वर्णित नारी स्वरूपा उषा एवं वाग्देवी के उपरोक्त विवरणों से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि वेदों में नारी को अत्यंत आदरणीय स्थान प्राप्त है। पुरुषों की सहयोगी एवं सहायक रूपा स्त्री को ऋग्वेद के तीसरे मंडल के 53 वें सूक्त के चौथे मंत्र में "जायदेस्तम्" अर्थात घर ही कहा गया है। यहां नारी को अषाढा अर्थात् अजेया, सहमाना अर्थात् विजयी, सहस्त्रवीर्या अर्थात असंख्य पराक्रम वाली, असपत्ना अर्थात् शत्रुरहिता, सपत्नघ्नी अर्थात् शत्रु नाशक, जयंती अर्थात् विजेता आदि विशेषणों से आभूषित किया गया है।

दुर्गा सप्तशती के अनुसार

"अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम्"।

एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा॥" [18]

अर्थात् सभी देवताओं के शरीर से उत्पन्न होकर तीनों लोकों में व्याप्त वह अतुल्य तेज जब एकत्रित हुआ तब वह नारी बना। नारी में सभी देवताओं का तेज एवं प्रकाश देदीप्यमान है इसीलिए पृथ्वी पर नारी की महिमा सर्व व्याप्त एवं सर्व गोचर है।

न स्त्रीरत्नसमं रत्नम् अर्थात् स्त्री रत्न के समान और कोई रत्न नहीं है। अतः हमारे वेद–वेदांगों, स्मृतियों, पुराणों एवं धर्म शास्त्रों में नारी की जिस सामाजिक एवं राजनीतिक प्रतिष्ठा का वर्णन अत्यंत गौरवपूर्ण तरीके से किया गया है, वह दर्शाता है कि वैदिक युग नारी उत्थान एवं शिक्षा के क्षेत्र में विशेष एवं महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उल्लेखनीय बात तो यह है कि वैदिक कालीन नारियों को देवी समान मानकर उनकी स्तुतियों में उन्हें राष्ट्र निर्मात्री, ज्ञानदात्री, सर्वशक्तिमती एवं शत्रुनाशा जैसे विशेषणों से संबोधित कर उनके महान गौरव को परिलक्षित किया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. विष्णुमित्र
2. शतपथ ब्राह्मण, 14.5.4.10
3. यजुर्वेद, 36.1
4. जैमिनी ब्राह्मण, 2.220
5. मनुस्मृति, 3.56
6. तैत्तिरीय ब्राह्मण, 2.7.7
7. ऋग्वेद, 8.33.19
8. ऋग्वेद 5.30.9
9. ऋग्वेद, 3.31.1
10. ऋग्वेद 3.61.3
11. ऋग्वेद 3.61.5

1ए 12 ऋग्वेद 3.61.6

12. ऋग्वेद 1.92.1
13. ऋग्वेद 7.75.5
14. ऋग्वेद 10.125.3
15. ऋग्वेद 10.125.6
16. ऋग्वेद 10.125.8
17. दुर्गा सप्तशती, 2.13

❖◆❖